कुरुक्षेत्र में ही धर्मयुद्ध क्यों?

धर्मक्षेत्रे कुरुक्षेत्रे समवेता युयुत्सवः।
मामकाः पांडवाश्चैव किमकुर्वत संजय।।

यानि' 'हे संजय'। धर्मभूमि कुरूक्षेत्र में एकत्रित युद्ध की ईच्छा वाले मेरे (कौरव) तथा पांडवों के पुत्रों ने क्या किया, बताओ? गीता का पहला प्रश्न, पहला श्लोक यहीं है। यहीं से गीता का पहला अध्याय प्रारंभ होता है।

आखिर इस क्षेत्र का मुख्य नाम कुरूक्षेत्र होने के पीछे क्या कोई मुख्य आधार भी है? इसका उत्तर जानने में एक ऐसी पौराणिक कथा का उल्लेख प्रासंगिक होगा जो अद्‌भुत है, जो चकित कर देती है।

एक बार पांडवों-कौरवों के पूर्वज महाराज कुरु एक भव्य स्वर्णिम रथ पर बैठकर यहाँ आए थे। देव योग से उनका स्वर्णिम यानी सोने का चमचमाता रथ यकायक सोने के हल में परिवर्तित हो गया। महाराज कुरु यह देखकर स्तब्ध हो गए। उन्होनें तत्काल यह निर्णय लिया कि क्यों न इस क्षेत्र में सोने के हल से बीज बोये जाए। इसके लिए उन्होंनें भगवान शिव के वाहन नंदी(बैल) तथा यमराज के वाहन भैंसे को बुलाकर सोने के हल में जोत दिये। तभी वहां उनके सामने भगवान विष्णु प्रकट हो गए।

उन्होंने कहा-'राजन् आप इसके बजाय मानव धर्म का कुछ कार्य कीजिये!' अब तीसरा चमत्कार हुआ कि सोने का वह हल उसी समय पृथ्वी में समा गया। यो समझिये कि इस क्षेत्र में वह गहरे तक गड़ गया। तब से वह वहीं कहीं पृथ्वी के नीचे मौजूद तो है पर कहां, किस जगह गड़ा अथवा समा गया? पता नहीं। कहा तो यह भी गया कि हल पुनः स्वर्ण रथ में परिवर्तित हो गया था। जो भी हो, महाराज कुरू ने विष्णु के चक्र से ही अपनी दायीं भुजा को हजारों टुकड़ों में काटकर उन्हें यहाँ बीज की तरह बो दिये। तब श्री विष्णु ने प्रसन्न होकर महाराज कुरू को दो वरदान दिये- पहला यह कि यह क्षेत्र अब उनके नाम पर कुरूक्षेत्र कहलायेगा। दूसरा यह कि इस भूमि पर जो मृत्यु को प्राप्त होगा वह सीधा स्वर्ग को जाएगा। महाराज कुरू ने ही कुरूक्षेत्र को ज्ञान, विज्ञान, संस्कृति का महान् केन्द्र बनाया था। तब से यह क्षेत्र उनके नाम कुरू से 'कुरूक्षेत्र' के नाम से पहचाना जाता है।

कुरूक्षेत्र पृथ्वी का प्राणप्रधान हृदय प्रदेश है- यह बात अगणित प्रत्यक्ष कारणों से प्रमाणित की जा सकती है। महाभारत के युद्धार्थ जब भूमि निश्चित की जाने लगी तो श्रीकृष्ण सहित पाण्डवों ने देखा कि कुरूक्षेत्र प्रदेश के एक हलवाहक किसान का लड़का खेत में खेलते- खेलते सर्पदंश से मर गया, किसान ने उसके शव को भूमि में गाड़कर पूर्ववत् तत्काल पुनः हल जोतना आरम्भ कर दिया। भगवान् ने निश्चित किया कि जिस क्षेत्र के प्रभाव से अपठित किसान भी इतने प्राणवान् हैं कि वे पुत्रशोक की उपेक्षा करके कर्त्तव्यपालन में जुट जाते हैं ऐसे क्षेत्र में किया युद्ध अवश्य ही निर्णायक युद्ध होगा। कोई भी पक्ष यहां प्राणों के मोह से ''धर्मयुद्ध'' से विचलित न होगा। अन्त में हुआ भी यही। श्रीमद्‌भगवद्‌गीता के आरम्भ में भी धृतराष्ट्र ने जो 'किमकुर्वत' प्रश्न किया है इसका स्वारस्य भी कुरूक्षेत्र मे 'धर्मक्षेत्र' विशेषण में निहित है, क्योंकि धर्मक्षेत्र होने के कारण वहाँ युद्धार्थ इकट्ठे होने पर भी क्षेत्र के प्रभाव से सद्‌बुद्धि आ जाने की सम्भावना की जा सकती थी। यदि धृतराष्ट्र के मन में यह आशा न होती तो 'किमकुर्वत' न पूछ कर 'कथ्मयुष्न्त' ऐसा प्रश्न किया जाता? परन्तु प्राणप्रधान क्षेत्र होने के कारण ही वहाँ सन्धि का वातावरण न बन सका।

यहीं पर, इसी क्षेत्र में एक सरोवर भी है। जिसका निर्माण स्वंय महाराज कुरू ने करवाया था। यहीं पर जगत पिता ब्रह्मा ने सबसे पहला यज्ञ किया था। इसे 'ब्रह्म सरोवर' के नाम से जाना गया। कुरूक्षेत्र में स्थित इस पवित्रतम सरोवर (तीर्थ) का धार्मिक महत्व पुराणों तथा महाभारत तक में वर्णित है।

ब्रह्माणमीसं कमलासनस्थं विष्णुं च लक्ष्मीसहिंत तथैव।
रूद्रं च देवं प्रणिपत्य मूर्ध्रा तीर्थ वरं ब्रत्सरः प्रवक्ष्ये।।

यह श्लोक इस ब्रह्मसरोवर के विशिष्ट महत्व को स्वयं ही सिद्ध कर देता है। वामन पुराण के अनुसार महाराज कुरू द्वारा निर्माण कराए गये इस ब्रह्म सरोवर की स्थापना ब्रह्माजी ने पृथूदक तीर्थ के निकट सरस्वती नदी के तट पर की थी।

कुरूक्षेत्र में ही हजारों वर्ष पुराना वह विशाल बरगद वृक्ष भी मौजूद है। चर्चाओं को माने तो यहीं पर पांडवों तथा कौरवों की सेनाओं के बीच में रथ रोक कर भगवान श्रीकृष्ण ने युद्ध नहीं करने के इच्छुक अर्जुन को गीता का उपदेश दिया था। अर्जुन अपने ही भाई-बांधवों पर चाचा-ताऊओं पर धनुष बाण द्वारा युद्ध करने की हिम्मत नहीं कर पा रहे थे। तब श्री कृष्ण ने उन्हें अपने विराट रूप के दर्शन देकर, धर्म-कर्म की शिक्षा दी, उन्हें युद्ध के लिए प्रेरित किया। बताते हैं कि यह वृक्ष इसका साक्षी कहा जाता है। यह जगह ज्योतिसर तीर्थ के रूप में जानी जाती है।

यह सर्व विदित सच है कि श्रीकृष्ण ने धर्म युद्ध में अत्यंत गूढ़, महत्वपूर्ण भूमिका निभाई। वे न केवल अर्जुन के साथी थे अपितु पांडवों के युद्ध जीतने का कारण भी थे। श्रीकृष्ण की ही प्रेरणा से धनुर्धारी अर्जुन युद्ध लड़ने का साहस कर सके, कौरवों के महान् योद्धा मृत्यु को प्राप्त हो सके।

इसी कुरूक्षेत्र में नारकातारी मंदिर भी है तथा बाण गंगा का उल्लेख है। युद्ध में घायल हो जाने पर भीष्म पितामह को प्यास लगी तो उन्होंने अर्जुन से पानी मांगा। अर्जुन ने तत्काल ही पृथ्वी पर तीर मारकर गंगा को प्रकट किया। जिसे 'बाणगंगा' के नाम से जाना जाता है। यहीं पर भीष्मपितामह ने श्रीकृष्ण को अपनी मृत्यु का उपाय बताया। वे समस्त पुराणों के ज्ञाता थे, विद्वान् थे, इसी स्थान पर उन्होंनें पांडवों को शांति पर्व तथा विष्णु सहस्त्रनाम सुनाया। भीष्म पितामह ने अपनी मृत्यु के समय वरदान दिया कि जाने-अंजाने में यदि कोई व्यक्ति पाप से अर्जित अन्न खा ले, उसकी बुद्धि इतनी मलिन, अधर्मित हो जाए कि वे धर्म-कर्म को बिल्कुल ही भुला दे तो इस कुण्ड में स्नान करने पर वह पापमुक्त हो जाएगा। ♦♦♦